(कवर की कविता का शेष भाग)

हो-हल्ला

कोई ज़रूरी नहीं कि पेड़ हरा ही बनाया जाए
लाल कहता है, "पत्ते मेरे ही अच्छे दिखेंगे!"
पीला, गुलाबी और नीला झगड़ते हैं –
"मैं.....मैं बनूँगा पेड़
पत्ते तो बस मेरे ही !!"

पानी तो सदियों से नीला रहा है
बहुत पुराना नहीं हो गया क्या पानी?
नारंगी कहता है "मुझे भर दो,
दुनिया का सबसे नया और अनोखा समन्दर मैं
ही बनाऊँगा!"
हरा, कत्थई, पीला भिड़ते हैं –
"मैं.....मैं बनूँगा समन्दर
पानी तो मेरा ही सबसे सुन्दर!!"

हवा दिखाई नहीं देती तो क्या
होती तो है ना!
कहता है गुलाबी, "मैं बनूँगा हवा
भूरा, बैंगनी, फिरोज़ी भी मचलते हैं –
"मैं..... हवा तो मैं ही
ठण्डी और बारिश की महक वाली!!"

वह चित्र में रंग भर रही है
और हर एक रंग चाहता है
कि उसके चित्र में
वही-वही फैला हुआ हो
रंग तो बस उसी का जमा हो
गाढ़ा और चटख.....!

हेमन्त देवलेकर
चित्रः तापोशी घोषाल

फोटो साभारः अजन्ता म्यूरल/ए. घोष

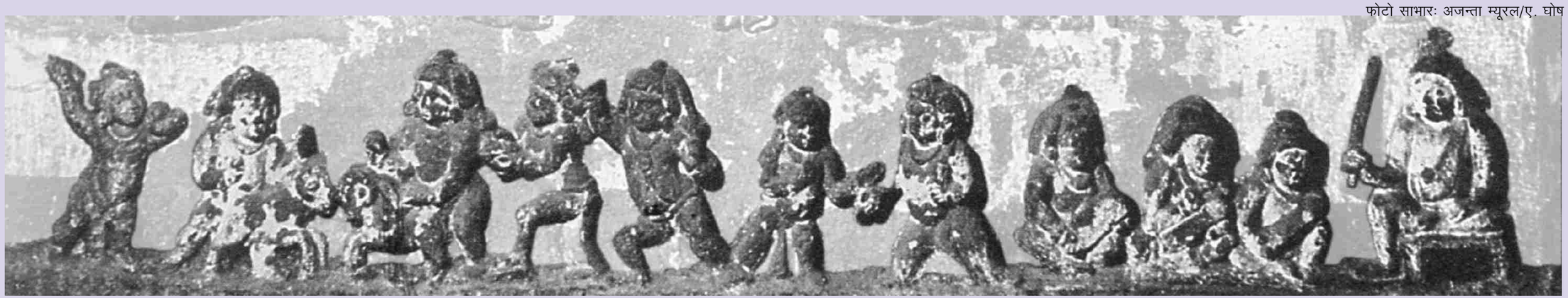

एक मास्टर, दस बच्चे व बकरे दो

सी एन सुब्रह्मण्यम्

अजन्ता की गुफाएँ यूँ तो अपने चित्रों के लिए प्रसिद्ध हैं ही, मगर वहाँ के शिल्प भी नायाब हैं। लेकिन न जाने क्यों उन पर कम ही लिखा गया है। मैं वहाँ लगभग पन्द्रह साल पहले गया था और वहाँ का एक शिल्प पटल आज भी मेरी स्मृति में छपा है। कुछ दिनों पहले मुझे उसका एक फोटो देखने को मिला तो मैंने सोचा उसका आनन्द तुम्हारे साथ फिर से लूँ।

यह शिल्प अजन्ता की गुफा नम्बर दो में बना है – हारिती देवी की बड़ी-सी मूर्ति के नीचे। हरिती बच्चों की संरक्षिका मानी जाती थी। इस शिल्प पटल में एक शाला का दृश्य है।

पटल के दाएँ सिरे पर गुरुजी एक ऊँचे आसन पर बैठे हैं। गुरुजी थोड़े भारी-भरकम हैं, कुछ तोंद भी निकली हुई है। पर उनका सबसे खास परिचय तो उनकी लम्बी छड़ी है। दाएँ हाथ में थमी छड़ी बच्चों की गलतियों का इन्तज़ार कर रही है। नीचे तीन बच्चे बैठे हैं – उनके हाथ में तख्त है जिस पर वे कुछ लिख रहे हैं। पहले दो बच्चे तो तल्लीनता से सिर झुकाए लिख रहे हैं, मगर तीसरा बच्चा कुछ बोर-सा हो रहा है। वह अपने तख्ते को ढीला छोड़कर सामने की ओर देख रहा है। उसके पीछे एक चौथा बच्चा है जो उठ खड़ा हुआ है और अपने एक और साथी के बुलावे पर वहाँ से खिसकने की मुद्रा में है। उनके पीछे पटल की बाईं ओर दो बकरे आकर्षण के केन्द्र बने हुए हैं। दो बच्चे उनकी सवारी करने की कोशिश कर रहे हैं। तीन और बच्चे उन्हें उकसा रहे हैं। शायद वे अपनी बारी का भी इन्तज़ार कर रहे हैं। इसी मज़े में भाग लेने के लिए बच्चे धीरे-धीरे कक्षा से खिसक रहे हैं।

कक्षा की नीरसता व बाहरी दुनिया की मस्ती की दो ठीक विपरीत स्थितियों को शायद ही किसी अन्य कलाकृति ने इतने सटीक तरीके से उभारा हो।

यह शिल्प पटल 500 ईसवी के आसपास वाकाटक राज्य में बनाया गया था, यानी आज से 1500 साल पहले। शायद यह अपने देश के सबसे पुराने पढ़ने-पढ़ाने का दृश्य है। इस चित्रण की खासियत यह है कि इसमें बच्चों को लिखते हुए दिखाया गया है, प्राचीन वर्णनों के अनुसार शिष्य सिर्फ दोहराकर याद करते थे, लिखते नहीं थे।

इस पटल के दृश्य से एक खास बात उभरती है – उस ज़माने में दस में से केवल दो बच्चे या ज़्यादा से ज़्यादा तीन बच्चे शाला की पढ़ाई में मन लगा पाते थे। बाकी उस शिक्षा से विमुख हो जाते थे। मामला आज भी ज़्यादा कुछ बदला नहीं है। आज भी शिक्षक इसी तरह छड़ी लेकर कुर्सी पर बैठे होते हैं और दो या तीन बच्चे उनकी बात सुनकर पढ़ाई-लिखाई में मन लगाते हैं। बाकी बच्चे इधर-उधर झाँकते रहते हैं, और कई बच्चे तो उठकर बाहर चले जाते हैं, कभी नहीं लौटने को। बाहरी दुनिया इतनी रंगीन व मस्तीभरी जो है! कितने शिक्षक आज इस पुराने तरीके को छोड़कर सिखाने के नए व आकर्षण तरीके अपनाते हैं? बाहरी वास्तविक दुनिया से सीखने की बजाए उससे विमुख कर देने वाली शिक्षा भला किसको भाए?